दूरियों और ट्रैफिक जाम से जूझते शहर

लगातार बढ़ते-फैलते महानगरों के लिए परिवहन सुविधा का नियोजन करना एक चुनौती है। इसी चुनौती के कुछ आयामों को प्रस्तुत करती यह टिप्पणी **सेमीनार** पत्रिका से ली गई है।

सालों पहले दार्शनिक इवान डी. इलिच ने अपनी पुस्तक 'एनर्जी एंड इक्विटी' में आगाह किया था कि मोटर कार जैसे वाहनों को बढ़ावा देने से न केवल ईंधन की खपत और परिवहन की लागत में इज़ाफा होगा, बल्कि लोगों के बीच असमानता की खाई भी चौड़ी होगी। ऐसे में नागरिकों के दो स्पष्ट समूह बन जाएंगे - एक वे जिनके पास तेज़ गति वाले वाहन होंगे और दूसरे वे जिनकी इन वाहनों तक पहुंच नहीं हो सकेगी।

लेकिन मोटर वाहनों की वजह से दूरियां केवल इन वर्गों के बीच ही नहीं बढ़ी हैं। मोटर वाहनों ने शहरों को विस्तार के लिए उकसाया है, जिससे घरों और कार्य स्थलों के बीच की दूरियां भी बढ़ती जा रही हैं।

तेज़ गति वाले वाहनों के पदार्पण से सफर के समय में जो कमी हुई थी, उसका लाभ एक सीमा के बाद जाकर समाप्त हो गया है। इलिच ने अपनी पुस्तक में इस बात की ओर भी ध्यान आकृष्ट किया था कि 'परिवहन के औद्योगिकीकरण' से भौगोलिक और सामाजिक संरचना पर भी व्यापक असर पड़ा है। तेज़ गति वाले वाहनों ने दूर रहने के प्रति लोगों की हिचक खत्म कर दी, जिससे शहर फैलते गए हैं। इधर से उधर जाने के पैटर्न में बदलाव की वजह से हमें रोज़ाना ट्रैफिक जाम की समस्या से भी दो-चार होना पड़ता है। शहरों के एक बड़े हिस्से पर सड़कों व पार्किंग स्थलों का कब्ज़ा हो गया है। चौड़ी-चौड़ी सड़कों ने हमें अपने पड़ोसियों से भी अलग कर दिया है जिससे एक-दूसरे का ख्याल रखने की प्रवृत्ति में गिरावट आई है। इसका सबसे ज़्यादा खामियाजा वृद्धों व बच्चों को भुगतना पड़ रहा है जिनकी देखरेख पहले पड़ोसी भी आते-जाते कर लेते थे। यह भी साफ है कि सड़कों पर अब ज़्यादा समय बीतने लगा है जिससे हमारी पारिवारिक ज़िंदगी और सामाजिक जीवन गंभीर रूप से प्रभावित हुए हैं।

इलिच ने उक्त विचार तीन दशक पहले व्यक्त किए थे।

इसके बाद से शहरों के हालात और भी बदतर हुए हैं। भारत ने पश्चिम के शहरीकरण और परिवहन मॉडलों का अंधाधुंध अनुकरण करने में ही अपनी 'भलाई' समझी है, लेकिन पश्चिम के देश अब खुद ही इन मॉडलों से तंग आकर इनसे मुक्ति पाने का जतन करने लगे हैं। खासकर युरोपीय देशों में अब पर्यावरण अनुकूल साधनों (जैसे साइकिलों) को बढ़ावा दिया जाने लगा है। व्यस्त शहरों में पैदल चलने वालों के लिए विशेष क्षेत्र बनाए जाने लगे हैं और सरकारें अपनी नीतियों में सार्वजनिक परिवहन व्यवस्था को मज़बूत बनाने पर ज़ोर दे रही हैं। हमारे शहर व परिवहन नीति निर्धारक ठीक इसकी विपरीत दिशा में जाने की कोशिश कर रहे हैं। ऐसा इस तथ्य के बावजूद हो रहा है कि मुंबई व दिल्ली जैसे महानगरों की करीब 40 फीसदी आबादी पैदल व साइकिल पर ही काम के लिए निकलती है। इसलिए अगर अगले कुछ सालों में हमारे अधिकांश बड़े शहर रहने लायक न रह जाएं तो इसमें किसी प्रकार का अचरज नहीं होना चाहिए। इसके नज़ारे अभी से देखे जा सकते हैं।

सड़क हादसों की लगातार बढ़ती संख्या (दिल्ली में ब्ल्यू लाइन बसों का कहर सुर्खियों में रहा है), ट्रैफिक जाम

और अधिक दूरी तय करने की मजबूरी में सड़कों पर बेमतलब समय व पैसे की बर्बादी ऐसे लक्षण हैं जो बड़े शहरों में ज़िंदगी को नर्क बनाते जा रहे हैं। यही नहीं, बढ़ते प्रदूषण की वज़ह से गिरता स्वास्थ्य भी एक समस्या बन गया है।

अधिकांश शहरवासी उपरोक्त वर्णन से सहमत ही होंगे, बल्कि हो सकता है समस्याओं की इस सूची में वे अव्यावहारिक नगरीय व परिवहन योजना से उत्पन्न कई नई समस्याएं भी जोड़ दें। चाहे पैदल चलने वालों या साइकिल चालकों के लिए जगह का अभाव हो या ऊंचे-ऊंचे कथित रोमांचक फ्लाइओवर्स का निर्माण, यह पूरी प्रणाली उन कार मालिकों के लिहाज़ से तैयार की गई प्रतीत होती है जिनकी संख्या बड़े शहरों में भी 15 फीसदी से ज़्यादा नहीं है।

तो आखिर इस 'शहरी अराजकता' की वजह क्या है? क्या ऐसा इसलिए है कि हमारी योजनाओं और उनके क्रियान्वयन में केवल उच्च वर्ग को ही ध्यान में रखा जाता है अथवा ऐसा इसलिए है कि हम उन अनुसंधान व विकास कार्यों पर ज़्यादा पैसा खर्च नहीं करते जिनसे इन समस्याओं के समाधान में सहायता मिल सकती है। उदाहरण के लिए, शहरों के विस्तारीकरण में हमें यह पता नहीं होता है कि परिवहन के ेकई वैकल्पिक मॉडलों में से किसका उपयोग किया जाए। रैपिड ट्रांज़िट सिस्टम को अमल में लाएं, पैरा ट्रांज़िट सिस्टम का इस्तेमाल करें या फिर साइकिलों, रिक्शा अथवा 'शेयर टैक्सी' व्यवस्था को बढ़ावा दें। क्या उपलब्ध जगह में सभी प्रणालियों को एक साथ समायोजित किया जा सकता है? शायद नहीं। तथ्य यह है कि ये सभी प्रणालियां न केवल अलग-अलग गति से संचालित होती हैं, बल्कि ये शहरों की भिन्न-भिन्न प्रवृत्तियों को भी दर्शाती हैं। ऐसे में सवाल यह है कि आखिर इनमें से कौन-सी प्रणाली किसी शहर विशेष के लिए उपयुक्त मानी जाए? इस सवाल का जवाब शोध कार्यों और अध्ययनों में मिल सकता है, लेकिन उस तरफ़ हमारा ध्यान ही नहीं है।

नगर नियोजन में एक समस्या यह भी है कि उच्च व प्रभावी वर्ग शहर की ज़मीन का इस्तेमाल अपने संकीर्ण हितों के अनुरूप करता है। इससे गरीबों व सामान्य वर्ग के लोगों के लिए यही रास्ता रह जाता है कि या तो वे शहरों में ही भीड़-भाड़ वाले इलाकों में दीन-हीन अवस्था में रहें या फिर शहर से दूर चले जाएं। दूर जाकर रहने का मतलब है काम के लिए रोज़ाना शहर की ओर भागना, यानी परिवहन की समस्या का सामना करना।

ऐसा भी नहीं है कि उक्त समस्याओं के समाधान का कोई रास्ता ही नहीं है। हमारे नगर नियोजकों और नीति निर्धारकों को चाहिए कि वे पश्चिमी देशों के सम्पन्न शहरों की ओर देखने की बजाय अपने यहां की परिस्थितियों के अनुरूप नगर नियोजन की नई संकल्पना तैयार करें और आम लोगों के अनुकूल परिवहन प्रणाली लागू करें। कोलंबिया का बोगोटा शहर न तो धनवान देश में स्थित है और न ही सम्पन्न शहरों की श्रेणी में आता है। इसके बावजूद दूरदर्शी नगर नियोजकों व सामाजिक दायित्व को समझने वाले नेताओं की वजह से यहां पिछले कुछ दशकों के दौरान बस आधारित सार्वजनिक परिवहन प्रणाली का विकास हुआ है। सड़कों पर पैदल चलने वालों व साइकिल चालकों के लिए अलग से स्थान रखे जाने की प्रवृत्ति भी बढ़ी है। इससे यह एक आदर्श शहर के रूप में उभरा है। अन्य शहर जिनमें सकारात्मक बदलाव आए हैं, उनमें बार्सीलोना, कोपेनहेगन, बर्लिन, पोर्टलैंड (अमरीका), क्योटो और क्यूरीटिबा (ब्राज़ील) प्रमुख हैं। ऐसे में सवाल यह है कि क्या हमारे कर्णधार गरीबों व आम जनता को भी शहरों में समायोजित करने और उनकी ज़रूरतों के हिसाब से नगर नियोजन की इच्छा-शक्ति रखते हैं? यह दुर्भाग्य की बात है कि स्थानीय स्वायत्त प्रशासनिक व्यवस्था (नगर पालिका, नगर परिषद इत्यादि) के संवैधानिक प्रावधानों के बावजूद नगर नियोजन में रियल एस्टेट मालिकों, ठेकेदारों व उद्योगपतियों के हितों को ही तरजीह दी जाती रही है और इसमें राजनेताओं, नौकरशाहों और विशेषज्ञों का भी समर्थन रहा है। आश्चर्य की बात तो यह है कि हमारी न्यायपालिका भी नगर नियोजन के उसी नज़रिये का समर्थन करती प्रतीत होती है, जिसमें गरीबों के लिए कोई स्थान नहीं है। फेरीवालों, रिक्शाचालकों, झुग्गी बस्तियों और फुटपाथों पर रहने वाले लोगों के खिलाफ अदालती फैसलों के मद्देनज़र सवाल यह भी उठता है कि आखिर फिर ये नगर किसके लिए हैं? क्या केवल धनी, सम्पन्न व प्रभावी लोगों के लिए? ***(स्रोत फीचर्स)***